WE
Vol 4 No. 2
December 2023

e-ISSN: 2583-2298

गांधीवादी आर्थिक दर्शनः एक दार्शनिक अवलोकन

अविनाश मिश्र*

सार

गांधी जी के सभी विचारों तथा क्रिया कलापों का मूल सत्य और अंहिसा की अवधारणा है। अतः उनके आर्थिक दर्शन की आधारभूमि भी सत्य, अहिंसा और अपरिग्रह (आवश्यकता से अधिक संचय न करना) की अवधारणा ही है। जे0सी0 कुमारप्पा को इस संदर्भ में उल्लेख करना समीचीन है कि-''गांधी जी के आर्थिक विचार मूलतः चार सिद्धान्तों पर आधारित जान पड़ते हैं। यथा-सत्य, अहिंसा, श्रम की महानता और सरलता''। गांधी जी की आर्थिक अवधारणा ट्रस्टीशिप सिद्धान्त (न्यासता सिद्धान्त) के रूप में प्रसिद्ध है। वस्तुतः गांधी जी ने किसी अर्थशास्त्र की रचना नहीं की है अपितु उन्होंने अर्थनीति का विश्लेषण किया हैं उनका आर्थिक चिंतन उनकी नीतिशास्त्रीय विषयक मान्यताओं यथा-सादा जीवन, समानता, सहज बुद्धि तथा भारतीय परिवेश की मूलभूत समस्याओं एवं परिस्थितियों से विकसित हुआ। गांधी जी के ट्रस्टीशिप विचार से प्रभावित होकर ही विनोवा भावे ने भू-आंदोलन चलाया जिसके परिणाम स्वरूप बड़े-बड़े जमींदारों ने अपनी आवश्यकता से अधिक भूमि गरीब किसानों एवं लोगों को दान करना प्रारम्भ किये वही भारत सरकार के प्रत्यक्ष कर व्यवस्था तथा वैश्विक आर्थिक संस्थाओं की सैद्धान्तिक संरचना में भी ट्रस्टीशिप विचार की भूमिका होने से इंकार नहीं किया जा सकता। इस विषय को शोध पत्र के रूप में चयन का कारण वर्तमान सामाजिक तथा आर्थिक समस्या है, क्यांेकि आॅक्सफेम इंटरनेशनल 2020-21 की रिपोर्ट के अनुसार भारत सबसे ज्यादे आर्थिक असमानता वाला देश बन गया है। इस समय देश में राष्ट्रीय सम्पति का 77 प्रतिशत हिस्सा केवल 10 प्रतिशत लोगों के पास है। कालान्तर में यह आर्थिक असमानता बहुत सारे दूसरे समस्याओं यथा सामाजिक तथा राजनीतिक समस्याओं का कारण बन जाता है। अतः वर्तमान समय में ट्रस्टीशिप के विचार को पुनर्जीवित करना अत्यन्त आवश्यक है। इस समस्या को ट्रस्टीशिप सिद्धान्त के संदर्भ में दार्शनिक दृष्टि से अवलोकन करना ही मेरे शोध पत्र का अभिष्ट उद्देश्य है।

मुख्य शब्दावली: *सत्य, अहिंसा, अस्तेय, अपरिग्रह, राज्य, ट्रस्टीशिप, मानव, उत्पादन, आर्थिक, विषमता, हृदय परिवर्तन, पूंजीवाद, समाजवाद, गरीबी, असमानता, सामाजिक न्याय।*

1. भूमिका

अहिंसक-राज्य-पद्धति की धारणा के साथ समाज की नवीन आर्थिक-संरचना के सम्बन्ध में गांधी जी का ट्रस्टीशिप सिद्धान्त विशेष रूप से मालकियत और आर्थिक वितरण के प्रश्न पर नैतिक और अहिंसक समाधान का प्रयास है। गांधी जी के ट्रस्टीशिप विचार की आधारशिला सत्य, अहिंसा, अपरिग्रह, श्रम की महानता तथा रस्किन की पुस्तक 'अन टु दिस लास्ट' है। वर्तमान समाज की आर्थिक व्यवस्था के सम्बन्ध में मुख्य रूप से दो विचार प्रचलित है। यथा-पूंजीवादी और समाजवादी। पूंजीवादी विचार उत्पादन के व्यक्तिगत स्वामित्व का समर्थन करता है, ऐसे अर्थ रचना का मुख्य आधार मांग और पूर्ति का नियम है। इस व्यवस्था का अनिवार्य परिणाम प्रतिस्पर्धा, उपनिवेशवाद अमीर-गरीब के बीच विषमता, शोषण और स्वार्थपरता है। यह विचार धारा असीमित उत्पादन करने पर आधारित है।

समाजवादी विचार, व्यक्तिगत स्वामित्व को ही शोषण का मूल कारण मानता है। अतः उत्पादन और वितरण के कार्यों को राज्य के हाथों सौंपता है। ऐसी व्यवस्था में व्यक्ति की स्वाभाविक उत्पादन की प्रेरणा समाप्त हो जाती है। यह विचार अर्थ का वितरण व्यापक रूप से समाज में करना चाहताा है। दोनों व्यवस्थाओं में कामगार मजदूर को अलगाव की समस्या का सामना करना पड़ता है। मजदूर संगठन तथा वर्ग-संघर्ष जैसी स्थिति बन जाती है। ऐसी समस्याओं का समाधान गांधी के ट्रस्टीशिप की अवधारणा में स्पष्ट दिखाई पड़ता है, क्योंकि गांधी जी के अनुसार-''इस धारणा में गीता के अपरिग्रह और समत्व की भावना, कानून के ट्रस्टीशिप[1] और ईशावास्य के तेन व्यक्तेन भुंजीथा[2] का अपूर्व समन्वय हो जाता है।'' यहां व्यक्तिगत स्वामित्व भोग के लिए नहीं बल्कि जन-कल्याण के लिए माना जाता है। इसलिए यहां मालिक और मजदूर के बीच वर्ग-संघर्ष नहीं बल्कि एक नवीन सम्बन्ध की कल्पना की गई है, जिसमें दोनों के बीच परस्पर विश्वास की भावना होती है। शायद इसीलिए गांधी जी अपने हरिजन नामक पत्रिका के एक अंक में ट्रस्टीशिप सिद्धान्त को अमीरों और गरीबों के बीच विषमता को मिटाने का अहिंसक- समाजवाद कहा है।[3] इसके द्वारा पूंजीपति को सुधार का एक सुअवसर[4] प्रदान किया जाता है, यह विश्वास रखकर कि मानव स्वभाव बदल सकता है।

*दर्शन एवं धर्म विभाग काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी; मो0. 9935064426; Email: mishraavinashbhu16@gmail.com

1गांधी मोहनदास करमचंद मेरे सत्य के साथ प्रयोग अहमदाबाद, नवजीवन प्रकाशन अहमदाबाद 1966 पृ0198
2हरिजन 22 फरवरी 1942
3हरिजन 22 अप्रैल 1940 पृ0 97
4हरिजन 25 मई 1952 पृ0 301

इसमें स्वार्थ और संग्रह के लिए उत्पादन का निषेध[5] और सामाजिक आवश्यकतानुकुल समाज हित के लिए उत्पादन का भाव है।[6] ट्रस्टीशिप विचार की सबसे प्रमुख बात यह है कि इसमें आर्थिक विषमता को दूर करने का आधार 'हृदय-परिवर्तन', 'दृष्टिकोण तथा विचार-परिवर्तन' को माना गया है।

गांधी जी यह मानते हैं कि बिना हृदय-परिवर्तन और विचार-परिवर्तन के कानून के द्वारा भी सच्चा समाजवाद नहीं लाया जा सकता। जहां असहयोग, सत्यग्रह और सविनय अवज्ञा की बात की गई है, वहां भी प्रमुख लक्ष्य प्रेम एवं अहिंसा के द्वारा स्वयं को कष्ट देकर भी दूसरों का दिल जीतना रहा है। अतः गांधीवादी अर्थव्यवस्था में शोषण, घृणा एवं हिंसा का कोई स्थान नहीं है। यह 'अपरिग्रह' तथा 'प्रत्येक व्यक्ति के श्रम' तथा 'नैतिक सिद्धान्त' पर आधारित आर्थिक-दर्शन है। पूंजीपतियों की हत्या करके उनकी सम्पत्ति को हड़प लेना राष्ट्र हित में नहीं होगा, क्योंकि समाज उनकी कुशलता एवं व्यावसायिक अनुभवों से वंचित हो जायेगा।

इस आर्थिक विचार के संदर्भ में कुछ दार्शनिक प्रश्न निम्न है-

क) यदि पूंजीपति का हृदय परिवर्तन न हो तो ऐसी स्थिति में इस विचारधारा की क्या भूमिका और जगह होगी?
ख) यदि व्यक्ति अपने आवश्यकता से अधिक संपत्ति रख ही नहीं सकता तो वह करोड़ों की सम्पत्ति क्यों उत्पन्न करेगा?
ग) प्रमुख दार्शनिक मानवेन्द्र नाथ राय ने गांधीजी के आर्थिक सिद्धान्त की आलोचना करते हुए कहा कि गांधी का अपरिग्रह-सिद्धांत एक प्रकार से निर्धनता का दर्शन शास्त्र (च्ीपसवेवचील व िच्वअमतेपजल) है।
घ) कुछ समालोचनों का कहना है कि पूंजीवाद का तर्कसंगत विकल्प श्रमजीवी क्रांति नहीं, बल्कि प्रबन्धकीय क्रांति है।[7]

पहले प्रश्न के संदर्भ में गांधी जी का एक प्रमुख उत्तर हरिजन के एक अंक में निहित है, जिसमें वे लिखते है-''जमीदारों और पूंजीपतियों की सत्ता श्रमिकों के सहयोग पर आधारित है।''[8] यदि श्रमिक वर्ग उनका सहयोग करना बन्द कर दें तो वे विपुल धनराशि इकट्ठा ही नहीं कर पायेंगे। अतः यदि वे मजदूरों के प्रति ट्रस्टी का बर्ताव नहीं करते हैं तो श्रमिकों में अहिंसक असहयोग करने की शिक्षा दी जा सकती है और इससे बाध्य होकर उन्हें ट्रस्टी का आचरण करना पड़ेगा।[9] यदि इतने पर भी व्यक्ति में ट्रस्टीशिप की भावना का विकास नहीं होता है तो राज्य को यह अधिकार होगा कि जनहित के लिए कम-से-कम बलप्रयोग करके उनकी संपत्ति का अपहरण कर ले।[10] अथवा उसका कमीशन तय करे। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि गांधी जी का यह सिद्धान्त कल्पना लोक का प्रत्यय नहीं बल्कि व्यावहारिक सिद्धान्त है, और इसकी व्यावहारिकता उत्तम संस्कृति पर आधारित है। इस प्रकार गांधी जी श्रमजीवियों की प्रभावी शक्ति में विश्वास करते हैं यदि जमीन और पूंजी शक्ति है, तो किसानों और मजदूरों का श्रम भी एक बहुत बड़ी शक्ति है बस जरूरत है यही दिशा में नियोजित करने की दूसरे प्रश्न के उत्तर में गांधी जी का कहना है-'वित्त की तृष्णा नहीं करना ही सर्वोत्तम है'[11]। इसीलिए उन्होंने अपने व्यक्तिगत जीवन में इस इच्छा का त्याग किया। इन विचारों की अभिव्यक्ति उनके निजी जीवन में दिखाई पड़ती है। वे कहते थे कि आधुनिक यूरोपीय सभ्यता यूरोपीय लोगों के अनुकूल हो सकती है, किन्तु इसका अन्धानुकरण भारत के लिए विनाशकारी सिद्ध होगा। आधुनिक सभ्यता का सबसे बड़ा दोष यह है कि इसकी प्रवृत्ति सुख के साधनों की निरन्तर वृद्धि करना है।

तीसरे प्रश्न के उत्तर में प्रो0 हरिशंकर उपाध्याय का मत उचित जान पड़ता है, जिसके प्रतिउत्तर में उनका कहना है-''वस्तुतः गांधीवाद दुनिया को गरीबी नहीं सिखाता, बल्कि आवश्यकताओं को कम करने का सिद्धान्त देता है। यह भोग की सीमा का निर्धारण करता है, क्योंकि भोग की सीमा का अतिक्रमण अनेक रोगों एवं समस्याओं को जन्म देता है। इसका उद्देश्य सामाजिक विषमता एवं गरीबी को दूर करके समाज के सभी लोगों को समान रूप से सुखी एवं समृद्ध बनाना है।[12]

2. निष्कर्ष

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर हम कह सकते है कि गांधीवादी अर्थव्यवस्था में 'जनता के द्वारा एवं जनता के लिए उत्पादन' की बात का प्रमुख स्थान है। उनके अनुसार बुनियादी उद्योगों का संचालन राज्य के द्वारा होना चाहिए, इन उद्योगों का संचालन लाभार्जन के लिए नहीं, बल्कि मानव-कल्याण के लिए होना चाहिए। उन्होंने अपने ट्रस्टीशिप सिद्धान्त (न्यास-सिद्धान्त) को समाजवाद एवं पूंजीवाद दोनों से भिन्न एक पृथक आर्थिक विकल्प के रूप में प्रस्तुत किया है। उनके आर्थिक चिंतन पर उनके नैतिक मान्यताओं का प्रभाव है। उनके द्वारा प्रतिपादित आर्थिक संरचना के विकास का तार्किक क्रम इस प्रकार होगा। स्वदेशी-सूक्ष्म उद्योग-लघु उद्योग-कुटीर उद्योग-सर्वोदय-लोक कल्याणकारी राज्य उनके आर्थिक सिद्धान्त से तर्कतः यह बात स्पष्ट हो जाती है कि अगर समाज पर शिक्षा का प्रभाव तथा अनुशान हो और सुशिक्षित जनता (लोकसत्ता) का अगर राजनीति में प्रतिनिधित्व हो और ऐसी राजनीति का अर्थव्यवस्था पर नियंत्रण तो निश्चय ही वह समाज और राष्ट्र लोक-कल्याणकारी होगा।

5हरिजन, 25 मई 1952, पृ0 301
6हरिजन, 25 मई 1952, पृ0 301
7उद्धृत-उपाध्याय, हरिशंकर, गांधीवाद के मूल स्वर, ऋषिकुल प्रकाशन, प्रयागराज, 2020, पृ0 77
8हरिजन, 22 अगस्त, 1940, पृ0 260-61
9हरिजन, 22 अगस्त, 1940, पृ0 260-61
10हरिजन, 25 अक्टूबर, 1952, पृ0 301
11हरिजन, 3 अगस्त, 1940, पृ0 67
12उद्धृत-उपाध्याय, हरिशंकर, गांधीवाद के मूल स्वर, ऋषिकुल प्रकाशन, पृ0 78

साहित्य अवलोकन-

गांधीवाद को विनाबा की देन, डा. दशरथ सिंह, बिहार हिन्दी ग्रंथ अकादमी, पटना, 2000

सत्य के साथ प्रयोग, महात्मा गांधी, अनुवादक-काशीनाथ त्रिवेदी, सर्वसेवा संघ प्रकाशन, राजघाट, वाराणसी, 2012

गांधीवाद के मूल स्वर (150वर्ष के पश्चात्) प्रो0 हरिशंकर उपाध्याय, ऋषिकुल प्रकाशन , प्रयागराज, 2020

गांधीयन इकोनाॅमिक थाॅट, जे0सी0 कुमारप्पा, सर्वसेवा संघ प्रकाशन, वाराणसी, 1958

©WE-Faculty of Arts